



प्रकाशनार्थ स्वीकृत

उच्च न्यायालय इलाहाबाद

लखनऊ पीठ

सिविल प्रकीर्ण पुनर्विलोकन आवेदन (दोषपूर्ण) संख्या 288 सन् 2023

गाँव सभा सोनबरसा, परगना, तहसील, गोंडा, द्वारा प्रधान अर्थात् आलोक चौधरी

.....आवेदक(गण)

बनाम

श्याम सुंदर चौधरी, द्वारा विधिक उत्तराधिकारी, ओम प्रकाश चौधरीविपक्षी(गण)

आवेदक(गण) के अधिवक्ता : पंकज गुप्ता

विपक्षी(गण) के अधिवक्ता : तरुण कुमार पांडेय, धर्मेन्द्र कुमार गुप्ता

न्यायालय संख्या-17

माननीय न्यायमूर्ति सुभाष विद्यार्थी

आईए-03/2023 पर आदेश:

1. पुनर्विलोकन आवेदक-गाँव सभा के विद्वान अधिवक्ता श्री पंकज गुप्ता, अपीलार्थी/विपक्षी - ओम प्रकाश चौधरी के विद्वान अधिवक्ता श्री तरुण कुमार पांडेय को सुना गया तथा अभिलेखों का परिशीलन किया गया।

2. यद्यपि कार्यालय ने यह आख्या दी है कि विपक्षीगण पर नोटिस तामील हो चुके हैं, तथापि केवल अपीलार्थी/विपक्षी ही उपस्थित हुए हैं और उन्होंने विलंब क्षमा करने के आवेदन के विरुद्ध आपत्ति दाखिल किया है।

3. वर्तमान आवेदन इस न्यायालय द्वारा द्वितीय अपील संख्या- 769 वर्ष 1983 को स्वीकार करते हुए पारित दिनांक 15.12.2011 के आदेश के पुनर्विलोकन हेतु आवेदन दायर करने में हुए लगभग 12 वर्षों के विलंब को क्षमा करने का अनुरोध करते हुए दायर किया गया है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



4. आवेदन के समर्थन में दाखिल शपथपत्र में यह कथन किया गया है कि ग्राम सभा, द्वितीय अपील संख्या- 769 वर्ष 1983 में विपक्षी संख्या- 1 थी, जिसे दिनांक 15.12.2011 के निर्णय के माध्यम से स्वीकार किया गया है। प्रश्नगत भूमि गाँव सभा की है, यह तालाब, भीटा और आबादी भूमि के रूप में दर्ज है, जो सार्वजनिक उपयोगिता की भूमियां हैं। प्रश्नगत भूमि के एक भाग पर एक पुराना मंदिर भी स्थित है। वाद, उत्तर प्रदेश जमींदारी उल्मूलन एवं भूमि सुधार अधिनियम की धारा 331 के प्रावधानों द्वारा वर्जित था। गाँव सभा के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किए गए किसी भी तर्क का संदर्भ दिए बिना ही अपील स्वीकार कर ली गई है।

5. आवेदक के विधिक वारिसों ने दिनांक 15.12.2011 के आदेश के निष्पादन के लिए निष्पादन आवेदन संख्या- 6 वर्ष 2020 दायर किया। इसका नोटिस प्राप्त होने पर यह पुनर्विलोकन आवेदन दायर किया गया है।

6. पुनर्विलोकन आवेदन दायर करने में हुए विलंब को क्षमा करने के आवेदन के विरुद्ध अपीलार्थी द्वारा दाखिल आपति में अन्य बातों के साथ-साथ यह कहा गया है कि दिनांक 15.12.2011 के आदेश की एक प्रति दिनांक 07.09.2012 को गाँव सभा पर तामील कराई गई थी। इसलिए, यह आदेश गाँव सभा की जानकारी में था। गाँव सभा ने दिनांक 15.12.2011 के आदेश को चुनौती देते हुए एस.एल.पी. (सिविल) संख्या- 16059 वर्ष 2012 दायर की थी और उक्त एस.एल.पी. को दिनांक 21.09.2012 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था। इस आदेश को दिनांक 16.04.2013 को राजस्व अभिलेखों में दर्ज किया गया है।

7. **नागालैंड राज्य बनाम लिपोक एओ:** (2005) 3 एससीसी 752 वाद में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि:-

"14. जी. रामेगौड़ा बनाम स्पेशल लैंड एक्विजिशन ऑफिसर [(1988) 2 एससीसी 142] में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि ऐसा कोई सामान्य सिद्धांत प्रतिपादित नहीं किया जा सकता जो किसी पक्षकार को उसके अधिवक्ता की सभी गलतियों से बचाता हो। "पर्याप्त कारण" अभिव्यक्ति की उदार व्याख्या (उदार अर्थान्वयन) की जानी चाहिए ताकि तात्त्विक न्याय को अग्रसर किया जा सके और सामान्यतः न्याय के हित में अपीलों को प्रस्तुत करने में हुए विलंब को क्षमा किया जाना आवश्यक है, जहाँ विलंब क्षमा करने की मांग करने वाले पक्षकार पर कोई घोर लापरवाही या जानबूझकर की गई निष्क्रियता या सद्भाव का अभाव अध्यारोपित न किया जा सके। उन मुकदमों में जिनमें सरकार एक पक्षकार है,

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



एक और पहलू भी है जिसकी, शायद, उपेक्षा नहीं की जा सकती। यदि सरकार द्वारा लाई गई अपीलें ऐसे व्यतिक्रमों के कारण खारिज हो जाती हैं, तो कोई भी व्यक्ति व्यक्तिगत रूप से प्रभावित नहीं होता है, बल्कि अंतिम विश्लेषण में जिसका नुकसान होता है, वह लोक हित है। सरकार के निर्णय सामूहिक और संस्थागत निर्णय होते हैं और उनमें निजी व्यक्तियों के निर्णयों जैसी विशेषताएं नहीं होती हैं। परिसीमा विधि, निस्संदेह, एक निजी नागरिक के लिए वैसी ही है जैसी सरकारी प्राधिकारियों के लिए है। सरकार को, किसी भी अन्य वादकारी की तरह, अपने अधिकारियों के कृत्यों और लोपों के लिए जिम्मेदारी लेनी चाहिए। किंतु वाद को तब कुछ अलग रूप मिल जाता है जहाँ सरकार ऐसा मामला स्थापित करती हैं जहाँ यह दिखाया गया हो कि उसके अधिकारियों या अभिकर्ताओं की ओर से किए गए कपट या असद्भाव के कृत्यों के कारण लोक हित को नुकसान पहुँचा है और जहाँ अधिकारी स्पष्ट रूप से उसके परस्पर विरोधी उद्देश्यों पर काम कर रहे थे। इसलिए, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि धारा 5 के प्रयोजनों के लिए 'पर्याप्त कारण' क्या है, इसका आकलन करने में, न्यायिक निर्णय में शामिल होने वाले विचारों से उन कारकों को बाहर रखना शायद कुछ अवास्तविक होगा जो सरकार के कामकाज के लिए विशिष्ट और लाक्षणिक हैं। सरकारी निर्णय जगजाहिर तौर पर धीमे होते हैं क्योंकि वे अपने लिए जाने की प्रक्रिया में काफी हद तक प्रक्रियात्मक लालफीताशाही से बोझिल होते हैं। इसलिए, एक निश्चित सीमा तक शिथिलता (छूट) दिया जाना अनुज्ञेय नहीं है। यह ठीक ही कहा गया है कि जो लोग सरकार की जिम्मेदारी संभालते हैं, उनके पास "जोड़ों पर थोड़ी ढील" (कामकाज में थोड़ा लचीलापन) होनी चाहिए। सरकारी कामकाज पर इन सीमाओं को सम्यक मान्यता देना - बेशक, उचित सीमाओं के भीतर - आवश्यक है यदि न्यायिक दृष्टिकोण को अवास्तविक होने से बचाना है। ऐसे मामलों में सरकार और निजी पक्षकारों को सभी पहलुओं में एक ही पायदान पर रखना शायद अनुचित और अवास्तविक होगा। सरकारी कामकाज की प्रकृति में ही निर्णय लेने की प्रक्रिया के आनुषंगिक प्रक्रियात्मक विलंब अंतर्निहित होता है। तदनुसार, एक वर्ष से अधिक के विलंब को क्षमा कर दिया गया था।

15. यह स्वयंसिद्ध है कि अधिकारियों/अभिकरणों द्वारा निर्णय जगजाहिर तौर पर

धीमी गति से लिए जाते हैं और फाइलों को एक मेज से दूसरी मेज पर खिसकाने तथा उन्हें

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



काफी समय तक मेज पर रखे रहने की बोझिल प्रक्रिया, जिससे विलंब होता है - चाहे वह जानबूझकर हो या अन्यथा? एक सामान्य परिपाटी है। निर्णय लेने की उनकी प्रक्रिया में प्रक्रियात्मक लालफीताशाही का अत्यधिक विलंब होना एक सामान्य लक्षण है। अतः, एक निश्चित सीमा तक शिथिलता दिया जाना अननुज्ञेय नहीं है। यदि राज्य द्वारा लाई गई अपीलें ऐसे व्यतिक्रम के कारण विफल हो जाती हैं, तो कोई भी व्यक्ति व्यक्तिगत रूप से प्रभावित नहीं होता है, बल्कि अंतिम विश्लेषण में जिसका नुकसान होता है, वह लोक हित है। इसलिए, "पर्याप्त कारण" अभिव्यक्ति पर प्रत्येक दिन के विलंब को स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त कारण की तकनीकी खोज करने के बजाय, न्याय-उन्मुख दृष्टिकोण अपनाते हुए व्यावहारिक रूप से विचार किया जाना चाहिए। वे कारक जो सरकारी परिस्थितियों के कामकाज के लिए विशिष्ट और लाक्षणिक हैं, न्याय-उन्मुख प्रक्रिया में उनके प्रति संज्ञान लेने की और व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता होती है। न्यायालय को वादों का निर्णय गुण-दोष के आधार पर करना चाहिए, जब तक कि मामला पूरी तरह से गुण-दोष विहीन न हो। पर्याप्त कारण के कड़े मानकों को साबित करने के लिए निजी वादकारी के मुकाबले राज्य द्वारा प्रस्तुत कारण को निर्धारित करने हेतु कोई अलग मानक स्थापित नहीं किए जा सकते। सरकार को उपयुक्त स्तर पर यह जांचने के लिए विधिक प्रकोष्ठों का गठन करना चाहिए कि क्या मामलों में न्यायालयों द्वारा निर्णय के लिए कोई विधिक सिद्धांत शामिल हैं या क्या मामलों में समायोजन की आवश्यकता है, तथा अधिकारियों को निर्णय लेने या समझौते के लिए उचित अनुमति देने हेतु अधिकृत करना चाहिए। अपील दायर करने के निर्णय की स्थिति में, अपील दायर करने के लिए जिम्मेदार अधिकारी द्वारा आवश्यक त्वरित कार्रवाई की जानी चाहिए और किसी भी प्रकार की चूक के लिए, यदि कोई हो, उसे व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी बनाया जाना चाहिए। इसी प्रकार, राज्य को किसी व्यक्ति के समान पायदान पर नहीं रखा जा सकता है। एक व्यक्ति यह निर्णय लेने में हमेशा तत्पर होगा कि क्या वह अपील या आवेदन के माध्यम से उपचार प्राप्त करे, क्योंकि वह विधिक रूप से व्यथित व्यक्ति होता है, जबकि राज्य एक अवैयक्तिक तंत्र है जो अपने अधिकारियों या सेवकों के माध्यम से कार्य करता है।



8. उपरोक्त निर्णय का पालन अंतियुर टाउन पंचायत बनाम जी. अरुमुगम (2015) 3 एससीसी 569 में किया गया था, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आगे यह अभिनिर्धारित किया कि "अगर न्यायालय को यह यकीन हो जाता है कि सरकारी अधिकारियों या सरकारी कर्मचारियों ने जान-बूझकर देरी करके न्याय को रोकने की कोशिश किया है, तो न्यायालय को बड़े जनहित को ध्यान में रखते हुए ऐसी स्थितियों में नरम रुख अपनाना चाहिए, विलंब को क्षमा कर देना चाहिए—चाहे वह देरी कितनी भी ज्यादा क्यों न हो—और मामले का निर्णय उसके गुण-दोष के आधार पर करना चाहिए।"

9. मणिपुर राज्य बनाम कोटिंग लामकांग (2019) 10 एससीसी 408 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि:-

"7. ... न्यायालय के लिए यह भी जरूरी था कि वह सरकारी कामकाज में होने वाली देरी, सरकारी निर्णय लेने की धीमी गति, और इस बात का निर्णय करने के सामान्य तरीके के प्रति भी सचेत रहे कि क्या राज्य को अपने विरुद्ध आए किसी निर्णय के विरुद्ध अपील करनी चाहिए। यह देखते हुए भी कि 'परिसीमा अधिनियम' से संबंधित पक्ष पर बुरा असर पड़ेगा, न्यायालय को लगा कि राज्य द्वारा दायर की गई अपील में हुए विलंब को क्षमा नहीं किया जाना चाहिए।

8. ऐसी ही मिलती-जुलती परिस्थितियों में, सरकार के कामकाज के संस्थागत स्वरूप पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए, जहाँ हो सकता है कि अलग-अलग अधिकारी ज़िम्मेदारी से काम न करें। ऐसा होने पर, राज्य के संस्थागत हितों के साथ अन्याय होगा। अगर राज्य द्वारा दायर की गई अपीलें किसी अधिकारी की व्यक्तिगत लापरवाही के कारण खारिज हो जाती हैं, तो जो लोग इसके लिए दोषी हैं, उन पर आमतौर पर व्यक्तिगत रूप से कोई असर नहीं पड़ता।"

10. हालाँकि, शिवम्मा बनाम कर्नाटक हाउसिंग बोर्ड 2025 एससीसी ऑनलाइन एससी 1969 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि:-

"261. ...इससे पहले कि हम इस फैसले को खत्म करें, हम यह पूरी तरह साफ करना जरूरी समझते हैं कि प्रशासनिक सुस्ती और लापरवाही कभी भी देरी को माफ़ करने का काफ़ी आधार नहीं हो सकती। हम सभी उच्च न्यायालय को एक ज़ोरदार संदेश देना चाहते हैं कि जब तक कोई सही और काफ़ी वजह सामने न आए, तब तक मामूली और ऊपरी

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

आधारों पर विलंब को क्षमा नहीं किया जाएगा; ऐसी वजह जिसमें सरकारी तंत्र यह साबित कर सके कि उसने नेकनीयती से काम किया और पूरे समय चौकस रहा। जैसा कि मशहूर है, प्रक्रिया न्याय की सेविका है। लेकिन न्यायालय, और खास तौर पर संवैधानिक न्यायालय, किसी मुकदमा लड़ने वाली सरकारी एजेंसी के लिए प्रक्रिया को नज़रअंदाज़ नहीं कर सकते; ऐसी एजेंसी जो अपनी ही दुलमुल रवैये के कारण मुकदमेबाज़ी में परिसीमा की बाधाओं से उतनी ही प्रभावित होती है।

262. उच्च न्यायालय को सरकारी अधिकारियों या उनके संस्थानों के ऐसे संवेदनहीन रवैये को वैधता नहीं देनी चाहिए, और अगर देरी की माफ़ी मांगने वाला पक्ष कोई सरकारी संस्था है, तो उन्हें ज़्यादा सावधान रहना चाहिए। उन्हें सरकारी लापरवाही और सुस्ती का ज़रिया नहीं बनना चाहिए। संवैधानिक न्यायालय को किसी निजी मुकदमेबाज़ की बेरुखी और तकलीफ़ों के प्रति सचेत रहना चाहिए। मुकदमेबाज़ों को कभी न खत्म होने वाली मुकदमेबाज़ी की स्थितियों में नहीं डाला जा सकता, जहाँ उनके निर्णयों या उनके पक्ष में आए आदेशों के नतीजे बाद के चरणों में बेकार हो जाते हैं। हमें इस लगातार चल रहे चलन को दोहराते हुए दुख हो रहा है, और हम सभी उच्च न्यायालय को यह सूचना देना चाहते हैं कि वे बहुत ज़्यादा देरी वाले मामलों को तब तक दोबारा न खोलें, जब तक कोई काफ़ी वजह मौजूद न हो; क्योंकि ऐसा करने से न्यायालय तो बस जले पर नमक छिड़कने का काम करते हैं, खास तौर पर सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के तहत अपील में, जहाँ उनका अधिकार क्षेत्र पहले से ही कानून के सवाल तक सीमित होता है।

263. परिसीमा इसलिए तय की जाती हैं ताकि वाद को अंतिम रूप देने के लिए एक व्यापक गुंजाइश बनी रहे। न्यायिक समय के महत्व से कहीं ज़्यादा, हमें उस सीमित साधनों वाले मुकदमेबाज़ की दुर्दशा की चिंता है, जिसे एक विशाल सरकार और उसके विस्तृत तथा कभी न खत्म होने वाले तंत्र के खिलाफ़ लड़ना पड़ता है। ऐसे वादों का निपटारा तो शुरू में ही हो जाना चाहिए, क्योंकि, मान लीजिए अगर कोई पक्ष जो सरकार के खिलाफ़ मुकदमा लड़ रहा है, किसी भी वजह से, अपील में देरी की माफ़ी का विरोध करने में असमर्थ रहता है—जैसा कि इस मौजूदा मामले में नहीं है—तो इससे मुकदमा फिर से मुकदमेबाज़ी के एक और दौर के लिए खुल जाता है, और ऐसा मुकदमेबाज़ एक बार फिर हताश और निराश रह जाता है। अंतरात्मा की न्यायालय होने के नाते, यह हमारा दायित्व है कि हम यह सुनिश्चित करें कि किसी भी मुकदमेबाज़ को न्याय पाने के लिए दर-दर भटकना न पड़े।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

264. किसी भी मुकदमेबाज़ को इतना सुस्त और उदासीन होने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए, और न ही न्यायालय द्वारा उसे विधि की प्रक्रिया का दुरुपयोग करने की अनुमति दी जानी चाहिए।

11. मैं वाद के तथ्यों का परीक्षण करने के लिए आगे बढ़ता हूँ, ताकि यह पता लगाया जा सके कि क्या ये तथ्य पुनर्विलोकन याचिका दायर करने में हुए विलंब को क्षमा करने का आधार बनाते हैं। विलंब क्षमा करने की याचिका के समर्थन में दायर शपथपत्र में यह कहा गया है कि विवादित भूमि एक सार्वजनिक उपयोग की भूमि है, जो 'तालाब', 'भीटा' और 'आबादी' के रूप में दर्ज है, और भूमि के एक हिस्से पर एक पुराना मंदिर भी मौजूद है। 15.12.2011 का वह निर्णय, जिसके पुनर्विलोकन की माँग की जा रही है, केवल अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता की दलीलों को दर्ज करता है और स्वीकार करता है; इसमें विपक्षीगण की ओर से रखी गई किसी भी दलील का ज़िक्र तक नहीं किया गया है। हालाँकि उच्च न्यायालय ने 15.12.2011 को दूसरी अपील मंज़ूर कर ली थी, फिर भी डिक्री होल्डर-अपीलकर्ता खुद लगभग नौ साल तक सुस्त रहा और उसने डिक्री को लागू करवाने के लिए आवेदन सिर्फ 2020 में दायर किया। जजमेंट-डेटर - गाँव सभा का दावा है कि उसे डिक्री लागू करवाने वाले आवेदन का नोटिस हाल ही में मिला है। हालाँकि डिक्री लागू करवाने वाला आवेदन परिसीमा से बाहर नहीं था, लेकिन आवेदन दायर करने में नौ साल की देरी और उसके बाद जजमेंट-डेटर - गाँव सभा को नोटिस मिल जाए, यह पक्का करने के लिए तुरंत कदम न उठाना, एक ऐसी ज़रूरी बात है जिससे पता चलता है कि जब डिक्री धारक खुद सुस्त रहा है और उसने उचित तेज़ी से काम नहीं किया है, तो पुनर्विलोकन आवेदन दायर करने में हुई देरी को माफ़ करने से प्रतिवादी - डिक्री धारक को कोई नुकसान नहीं होगा। यह बात भी बहुत ज़रूरी है कि विवादित संपत्तियाँ ग्राम प्रधान की निजी संपत्तियाँ नहीं हैं, बल्कि उनमें एक तालाब, एक मंदिर और एक 'भीटा' (एक टीला या छोटी पहाड़ी) शामिल हैं, जो सार्वजनिक संपत्तियाँ हैं।

12. **हिंच लाल तिवारी बनाम कमला देवी:** (2001) 6 एससीसी 496 वाद में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि:-

"13. यह ध्यान देना ज़रूरी है कि समुदाय के भौतिक संसाधन, जैसे जंगल, तालाब, पोखर, टीले, पहाड़ वगैरह, प्रकृति का अनमोल तोहफ़ा हैं। वे एक नाजुक पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखते हैं। उन्हें एक सही और सेहतमंद माहौल के लिए बचाकर रखना ज़रूरी है, जिससे लोग एक अच्छी ज़िंदगी जी सकें; यही संविधान के अनुच्छेद 21 के अंतर्गत मिले



अधिकार का मूल तत्व है। सरकार को, जिसमें राजस्व अधिकारी (यानी प्रत्यर्थी 11 से 13) भी शामिल हैं, यह देखते हुए कि एक तालाब बेकार पड़ा है, उसे विकसित करने पर ध्यान देना चाहिए था। ऐसा करने से, एक तरफ तो पारिस्थितिक आपदा से बचाव होता और दूसरी तरफ आम जनता के फायदे के लिए एक बेहतर माहौल मिलता। इस तरह की चौकसी ही उन धूर्ततापूर्ण कोशिशों के खिलाफ सबसे अच्छा बचाव है, जिनके ज़रिए लोग 'गैर-आबादी' (बिना बसावट वाली) जगहों पर भूमि का आवंटन पाने की कोशिश करते हैं।"

13. वाद के सभी तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, मेरा यह मानना है कि ऊपर बताए गए तथ्यों के आधार पर पुनर्विलोकन आवेदन दायर करने में हुए विलंब को क्षमा करने का एक मज़बूत आधार बनता है। तदनुसार, आवेदन स्वीकार किया जाता है और पुनर्विलोकन आवेदन दाखिल करने में हुए विलंब को क्षमा किया जाता है।

पुनर्विलोकन आवेदन के ज्ञापन पर आदेश:

14. विपक्षीगण को पुनर्विलोकन आवेदन का नोटिस जारी किया जाए।
15. पुनर्विलोकन आवेदक के विद्वान अधिवक्ता इस संबंध में एक सप्ताह के भीतर आवश्यक कार्यवाही करें।
16. नोटिस के तामील के तुरंत बाद, तामील रिपोर्ट के साथ, पुनर्विलोकन आवेदन को सूचीबद्ध किया जाए; साथ ही द्वितीय अपील संख्या 769 सन् 1983 और अनुच्छेद 227 के अंतर्गत मामला संख्या 7284 सन् 2025 का अभिलेख भी संलग्न किया जाए।

(न्यायमूर्ति सुभाष विद्यार्थी)

20 जनवरी, 2026

राम।